Swami Vivekananda Advanced Journal for Research and Studies
Online Copy of Document Available on: www.svajrs.com

ISSN:2584-105X Pg. -152-157

रामदरश मिश्र : यथार्थबोध के मूर्धन्य कवि

डॉ.सागर चौधरी
गोखले एज्युकेशन सोसायटी स्थापित
एच.पी.टी आर्ट्स ॲण्ड आर. वाय. के सायन्स महाविद्यालय, नासिक
भ्रमणभाष क्र. 7276180662
अनुडाक - sgcsagar2010@gmail.com

Accepted: 04/11/2025
Published: 05/11/2025 *DOI: http://doi.org/ 10.5281/zenodo.18951130*

सारांश

रामदरश मिश्र का जन्म 15 अगस्त 1924 को हुआ और मृत्यु हाल फिलहाल में यानी 31 अक्तूबर 2025 में हुई। आपको यथार्थबोध के मूर्धन्य कवि कहना उचित रहेगा क्योंकि; आपकी कविताओं में सामाजिक यथार्थबोध है ही किंतु उसमें मानव के नित्य जीवन की समस्याओं के साथ-साथ, दृढ़ जिजीविषा का संघर्ष भी है। आपकी कविता संघर्ष करते हुए मानव से लेकर प्रकृति के अनेक प्रतीक एवं प्रतिमानों का सहारा लेती है। काव्य सृजन की मर्मज्ञता, शब्द चयन की संवेदनाएँ, भावपक्ष की प्रासंगिकता, विषय चुनाव की सफलता व अनुभूतियों की पराकाष्ठा इसी कारण आपकी काव्य यात्रा विचारधाराओं की लंबी श्रृंखला भी है। इन सभी धाराओं से होकर आपका काव्य सृजन किस प्रकार यथार्थबोध के चरमोत्कर्ष पर पहुँचता है? यह समझते हैं...

मुख्य शब्द :- *विविध अंग, कवि, यथार्थबोध, संवेदना, भाव, सृजन, प्रकृति, प्रतीक, प्रतिमान, विचारधारा, छायावाद, नई कविता, समकालीन कविता, मार्क्सवाद.*

परिचय - रामदरश मिश्र ने गद्य साहित्य में उपन्यास, कहानियाँ, निबंध, आत्मकथा, यात्रावृत्त तथा आलोचना में अपनी लेखनी चलाई है। यद्यपि कोई साहित्यकार साहित्य की गद्य, पद्य तथा आलोचना इन विधाओं में अपना कौशल दिखाता हो, तब यथासंभव वह किसी एक विधा में स्वयं को सहज महसूस करता होगा। अर्थात रामदरश मिश्र का मन कविता सृजन में अधिक दृढ़ होता चला गया। आपने लंबी काव्य-यात्रा की है। आपका पहला काव्य-संग्रह 'पथ के गीत' सन 1951 में प्रकाशित हुआ किंतु गोरखपुर से प्रकाशित होने वाली 'सरयू पारीण' नामक पत्रिका में आपकी प्रथम कविता 'चाँद' जनवरी सन् 1941 में प्रकाशित हुई थी। आपने सन् 1942 में कवित्त सवैयों में 'चक्रव्यूह' नामक एक खंड काव्य का लेखन किया। इसी के साथ 'बैरंग बेनाम चिट्ठियाँ' (1962), 'पक गई है धूप' (1969), 'कंधे पर सूरज' (1977), 'दिन एक नदी बन गया' (1984), 'जुलूस कहाँ जा रहा है' (1989), 'आग कुछ नहीं बोलती' (1992), 'बारिश में भीगते बच्चे' (1997) तथा 'ऐसे में जब कभी' (1999) आदि। ग़ज़ल लेखन में भी आप प्रमुख हस्ताक्षर हो जिनमें 'हँसी ओठ पर आँखें नम हैं' (ग़ज़ल संग्रह), 'ऐसे में जब कभी', 'आम के पत्ते', 'तू ही बता ऐ जिंदगी' (ग़ज़ल संग्रह), 'हवाएँ साथ हैं' (ग़ज़ल संग्रह) आदि प्रमुख है। आपकी कविता की शैली छोटी कविता, लंबी कविता, ग़ज़ल के प्रारूपों में जानी जाती है।

मुख्य आलेख –

रामदरश मिश्र यथार्थबोध के मूर्धन्य कवि होने के साथ-साथ शताब्दी के महान कवि भी थे। आपने संपूर्ण शती के मानव की व्यथा को देख थी। 'पथ के गीत'(1951) की कविताएँ मानवीय मूल्यों को समेटकर प्रस्तुत की गई है। इसमें मानव के निजी भाव है। आपके काव्य में प्रगतिशीलता का विद्रोही अंग तथा नई कविता का एकाकी मानव प्रस्तुत हुआ है। जो सुखी जीवन के मुरूस्थलों को ढूँढ रहा है। यह भी आपकी कविता का अभिन्न अंग है। 'चल रहा हूँ' कविता की पंक्तियाँ देखें - "चल रहा हूँ क्योंकि गति से पन्थ का निर्माण होगा / ज़िन्दगी का सिन्धु फेनिल दूर जीवन का सहारा / प्राण के बहते स्वरों को मिल न पाता है किनारा / चाहता हूँ मैं ठहर क्षण भर किसीका प्यार ले लूँ / पर बहाती जा रही तूफ़ान की गतिमान धारा / सिन्धु के उस पार से कोई विकल आवाज़ आती / दूर कोलाहल – पुलिन से आह मानव की बुलाती"[1] जीवन की समस्याओं से जूझना मानव का एकाकीपन है। सिन्धु के इस किनारे से पार के अंतिम चरम पर पहुँच पाना ही मानव का लक्ष्य है। जीवन की इस वनस्थली में यौवन के प्रेम के भावों के साथ-साथ, जिंदगी फेनिल (झाग) जो मानव के निजी भावों की दृष्टि बोझिल तथा धुंधली बना देता है। मानव को प्रश्न यह भी है कि रुककर प्रेम पा लूँ या चलता रहूँ। कवि आगे लिखता है – "चाहता हूँ मैं किसी छाया तले निश्वास ले लूँ / किन्तु कोई कह रहा दिन रात चलना जिंदगी है"[2] मानव थका हुआ अनुभूत कर रहा होगा। वह कुछ क्षण मात्र के लिए स्तब्ध भी हो लेगा किंतु सदैव उसे उसका सांसारिक कर्तव्य पुकार रहा है, उसे दिन रात चलना ही होगा। सन 1960 के दशक का दौर समसामयिक समय में भी सटीक लग रहा है। मानव के निजी जीवन के कार्यकलाप तथा कर्तव्य आज भी असीमित हैं। 'पथ के गीत' काव्य संग्रह की कविताओं के संदर्भ में डॉ. स्मिता मिश्र लिखती है - "यह पहला संग्रह छायावादी प्रभाव के दौर की कविताओं का है। इसीलिए मूल स्वर रोमानी है लेकिन इसमें प्रकृति और नारी-प्रेम की कविताओं के साथ-साथ राजनीतिक और सामाजिक चेतना की अनेक कविताएँ हैं। इस संग्रह में प्रकृति संबंधी कुछ ऐसे गीत हैं जो अनुभव, संवेदना और शिल्प की ताज़गी और व्यंजना लिए हुए हैं और जिनका बहुत सुंदर विकास कवि के आने वाले गीतों में हुआ।"[3] आपने सही लिखा है क्योंकि प्रकृति का सौंदर्य या प्रकृति के मनमोहक प्रतीक रामदरश मिश्र जी के काव्य में उद्धृत हुए हैं। 'जिन्दगी की राह पर' कविता की पंक्तियाँ देखें – "ज़िन्दगी की राह पर पद-चिह्न भरता जा रहा हूँ / छू चुका हूँ प्राण सपनों के, कली शरमा चुकी है / इन्द्रधनु सी आँख में छवि उर्वशी मुसका चुकी है / सुरभि की उड़ती लहर में पाल खोले नाव मेरी / तिर चुकी है आज उनकी याद करता जा रहा हूँ।"[4]

तथा

"रेत पर लिखता गया हूँ मौन अन्तर की कहानी / घाटियों में सो रहा रव बांध झंझा की जवानी / राह पर चलना अगर तो प्रीति क्या है भीति क्या है ? / फूल हो या शूल हो मैं पांव धरता जा रहा हूँ।"[5]

तथा

'चल रहा हूँ' कविता की पंक्तियाँ देखें - "इसलिए बुझते हुए भी दीप दामन में छिपाए / जी रहा हूँ क्योंकि बन्दी एक दिन तुफान होगा"[6]

यहाँ छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा तथा रामदरश मिश्र के प्रतीक योजना की तुलना हो सकती है। 'दीपक', 'कमल', 'शूल' और 'झंझा', 'दर्पण', इंद्रधनुष, तथा 'शलभ' निम्न महादेवी वर्मा के प्रिय प्रतीक है। महादेवी वर्मा के काव्य की कुछ झलकियाँ देखें – "दीप मेरे जल अकम्पित / घुल अचंलन"[7] (कवयित्री परम पुरूष की प्रणय में अविकार, निरंतर जल रही है, उन्होंने अपने प्रेम को विचलित नहीं होने दिया।)

तथा

"नव इन्द्रधनुष सा चीर / महावर अंजन ले / अलि-गुंजित मीलित पंकज नभ से रुन-झुन ले / फिर आई मनाने सांझ / मैं बेसुध मानी नहीं!"[8]

तथा

"पथ में बिखरा शूल, बुला जाते हो"[9]

तथा
"ढुँढते झंझा मुझ से लें, मृत्यु का वरदान!, शेष यात्रा यामिनी मेरा निकट निर्वाण"[10] (बाधाओं, झंझा का प्रतिकात्मक के लिए प्रयोग) किया गया है।
तथा
"दिपकमय कर डाला जब / जलकर पतंग ने जीवन / क्यों जग कहता मतवाली? / क्यों न शलभ लुट लुट जाऊँ, झुलसे लसे पंखों को चुन लाऊँ"[11] (यहाँ शलभ को मूढ़ जीव के रूप में प्रस्तुत किया गया है और पतंग आदर्श प्रेमी का प्रतीक है।) जहाँ महादेवी वर्मा की प्रतीक योजना व्यक्ति की आंतरिक चेतना को स्पष्ट करती है। जो व्यक्ति का आंतरिक प्रेम, त्याग है। प्रकृति से जुड़े प्रतीकों में प्रियतम से मिलन की आसक्ति, आस तथा विरह का दु:ख भी, वहीं रामदरश मिश्र के प्रतीक मानव की दिनचर्या की समस्याओं से जुड़े हैं। स्पष्ट रूप से कहना होगा कि रामदरश मिश्र के काव्य में उच्च कोटि का मानवीकरण है। ऐसा मानवीकरण सुमित्रानंदन पत जी के प्रगतिवादी काव्य 'युगांत', 'ग्राम्या' में भी दिखाई देता है। तात्पर्य यह है कि महादेवी वर्मा द्वारा प्रयोग में लाए गए प्रतीक रामदरश मिश्र के काव्य में है किंतु उनका प्रारुप सूक्ष्म, गूढ़ नहीं उसमें व्यक्तिगत प्रेम नहीं, यदि कतिपय जगह रामदरश मिश्र का काव्य व्यक्तिगत हो भी जाए तो उनके भीतर का कवि जनमानस का प्रतिनिधित्व करता है। छायावाद की प्रतीक योजना का साम्य रामदरश मिश्र की कविता को संपूर्ण रुप से छायावादी नहीं बनाता। हाँ! विशिष्ट प्रतीकों के कारण यह निश्चितरूप से कहना होगा कि 'पथ के गीत' में छायावाद की झलकियाँ हैं। इसी मानवीकरण के कारण रामदरश मिश्र की कविता दृष्टि मानवतावादी बनी हुई है। जैसे – '15 अगस्त' नामक कविता में आप व्यक्त हो रहे हो – "आज अग्नि के कुंजों से झर रही मधुर झनकार / नई ज्योति उठ रही फाड़ कर धूएँ की दीवार / आहुति पूर्ण हुई जीवन की बलिवेदी मुस्काई / ली स्वतन्त्रता ने प्राणों के शतदल पर अँगड़ाई / हरसिंगार के फूल झर रहे तारों के अधरों से / गमक रही है फिर सदियों पर जीवन की अमराई।"[12] प्रस्तुत कविता में हरसिंगार, शेफाली, रजनीगंधा आदि फूलों के साथ-साथ शबनम, धुमिल, बूँदें, प्राची, शिखर हिमगिरि आदि प्राकृतिक प्रतीकों का प्रयोग हुआ है।

भारतीय चेतना के जनमानस की यह कविता हुतात्माओं की महानता को समर्पित है। 'शहीद की राह पर' कविता की पंक्तियाँ देखें – "हौले हौले दीप सुनहले जलो पिया की राह पर / जिस पथ से जा कभी न लौटी उन प्राणों की रागिनी / निर्मोही की बाट जोहती खड़ी रही अनुरागिनी/ मंज़िल के पथ पर साँसों का सम्बल उड़ा सुहास सा/उड़ता गया सुहाग गगन में, हँसती रही अभागिनी"[13] वीरों की पत्नी युद्ध से पूर्व और पश्चात् दोनों समय खिन्न रहती है। पति की राह देखती, जब सुहाग उजड़ जाता है। नारी जीवन का इससे बड़ा दु:ख अन्य कोई न होगा। शहीदों की राह पर यह मोड़ कितना करुण हो उठता है? जब विजय की कल्पना भरी निरीह आँखे घनघोर दु:ख के कूप में गिर पड़े, निश्चित रूप से यह दर्द का क्रंदन आकाश को भेदता होगा।

'9 अगस्त' नामक कविता का महत्व अधिक बढ़ जाता है। क्योंकि 8 अगस्त 1942 को 'भारत छोडो' आंदोलन शुरू हुआ एवं महात्मा गाँधीजी ने 'करो या मरो' का नारा दिया था। जनता की स्थिति असहज हो चुकी थी। दूसरी बात 9 अगस्त 1946 को कलकत्ता में भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए थे इस दौरान लाशों के ढ़ेर का चित्र भयावह था। और महत्वपूर्ण घटना यह कि 9 अगस्त 1945 को जापान का नागासाकी शहर काँप उठा था। द्वितीय विश्वयुद्ध की इस घटना में भारतीय सैनिक भी मारे गए थे। अंग्रेजों ने अनेक भारतीय सैनिकों को युद्ध में भेज दिया था। रामदरश मिश्र लिखते है – "क्या यह वही दिन है ? / जिस दिन स्वतन्त्रता की क्षुब्ध चिनगारियाँ पवन-स्वाँस पीती हुईं छाई थीं वसुन्धरा के तप्त कोने-कोने में / आया था सरोष पराधीनता की मेदिनी पर / क्रान्ति का भयंकर भूचाल हहराता हुआ / डगमग / क्या यह वही दिन है ? / जिस दिन जननी के पगों में थीं मचल उठीं / बेड़ियाँ गुलामी की, बढ़े थे हाथ तोड़ने को/मोड़ने को विश्व-शक्ति / लोल लोल लहरें उठी थीं लड़ने को / और हमने भी हँसकर तो किया था आलिंगन उस मृत्यु का।"[14] आपके द्वारा लिखित राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत कविताएँ जब अंतराष्ट्रीय स्तर के द्वंद्व की समझ रखती हो तब राष्ट्रीयता की मूल संवेदना विशाल एवं उग्र बन जाती है। नयी कविता पर विचार करते हुए स्पष्ट करना होगा कि नयी कविता पर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की वैश्विक परिस्थितियों और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की राष्ट्रीय परिस्थितियों का असर था। विश्व युद्ध में हुए भयावह विनाश ने यूरोप को व्यापक स्तर पर प्रभावित किया। मृत्यु और विनाश का भय जीवन की वास्तविकता बन गई थी। इसी कारण मध्यवर्ग में भोगवाद की प्रवृत्ति बढ़ी। विश्व बाजार की होड़ और युद्धों की जघन्यता के बीच व्यक्ति को यह लगने लगा कि सत्य केवल मृत्यु है, शेष सब कुछ मिथ्या है। आस्था, आदर्श, मूल्य, प्रगति, भविष्य सभी कुछ मिथ्या है। इस सोच ने लोगों को स्वार्थ प्रेरित और आत्म केन्द्रित बनाया। साहित्य के क्षेत्र में अनेक वाद स्थापित हुए। तात्पर्य है कि समयानुसार काव्य में विचारधाराओं का अंतर स्पष्ट होता गया। आपकी कविता सभी वादों में ढली किंतु समय के साथ चलती चलीं थीं। काव्य संग्रह 'बैरंग बनाम चिट्ठियाँ' (1962) तथा 'पक गई है धूप' (1969) की कविताएँ समय से बातें करती है। यह दौर अकाल, दरिद्रता तथा भूखमरी का दौर था फिर भी मानव सूक्ष्म सुखों में सहज होना चाहता था। यह आयाम आपकी कविता के माध्यम से चरमोत्कर्ष को छू लेता है। 'सत्य से साक्षात्कार' कविता की पंक्तियाँ देखें – "सत्य! / बार बार ऐसा लगा है मुझको / सौरभ

की साड़ी-सी पहने तुम / मेरे अंगों पर सिहरन भरते निकल गये / आँचल का छोर मेरी काँपती उँगलियों को क्षण भर उलझा / आगे फिसल गया / लेकिन ओ सत्य ! / जब जब मैंने तुमको देखा है/ साँझ के झुटपुटे में / आँखों में एक बेबसी का परिवार भरे / घुटनों पर माथा टेके बैठे/ फटा हुआ दामन फैलाये/ हाटों में, चौरस्तों पर / रेस्त्राँ की चाय में डुबोते हुए लावारिस दर्दों को / मूक बस्तियों के वीराने में/ हाँक लगाते खोये गीतों को / एक स्वप्न बेच कर श्मशान यात्री से / वापस जाते घर को / आह! आत्महत्या के पहले... / तब तब ओ सत्य! / मेरी आत्मा चिल्लाई है- मैं ही हूँ... मैं ही हूँ... मैं ही / हूँ...।"[15] ऐसा मानव द्विधा में है। कविता 'आत्महत्या से पहले' की अभिव्यक्ति स्पष्ट है, मानव का मन विचारों के द्वंद्व में फसा है। उलझासा अपने आपसे, आत्महत्या करूँ या ना करूँ? पंक्तियाँ देखें - "जीने की कितनी तड़प हृदय में थी मेरे/कितना प्यारा / संसार दृगों को लगता था / हर राह बुलाती थी, हर मौसम गाता / काँटों में भी फूलों का सपना जगता था।"[16] समस्या ग्रामीण मानव की भी है तथा शहरी मानव की भी। देहात में कृषक जीवन की समस्या तथा नगरों में नौकरी पेशा धक्के खाता बेबस मानव। आपकी कविता गाँव से लेकर नगरों और महानगरों तक, स्वाधीनता प्राप्ति के लिए संघर्ष करते हुए मूल्यधर्मी समय से लेकर राजनीति से दूषित और जटिल हो हुए समय तक फैली हुई है। नगरों महानगरों और जटिल समय ने हमें यथार्थ के अनेक नए बिंब दिए। ये बिंब निरंतर जटिलतर होते गए हैं। व्यक्ति होने और न होने के बीच अपने को पाता है। वह जो है वह बाहर दिखाता नहीं और जो बाहर दिखाता है वह होता नहीं। 'होने और न होने के बीच' कविता में इस बिंब को उभारा है और उनकी अनेक परवर्ती कविताओं में दो विरोधों से बने यथार्थ के अनुभव बिंब देखे जा सकते हैं। 'कंधे पर सूरज' कविता संग्रह की कविताओं का भाव देखें – "किसने बैठा दिया है मेरे कंधे पर सूरज / एक जलता हुआ असह्य बोझ / मैं कबसे ढो रहा हूँ / उसकी तेज़ आँखों से लिपटकर / चली आती है कहाँ-कहाँ की अभिशप्त आत्माएँ? और मुझमें समा जाती हैं / मैं पिघलती धूप-सा फैलने लगता हूँ अनेक अंतरालों में।"[17] प्रारंभ में कविता सूर्य के साथ होने की निरंतरता और उससे उत्पन्न यातना का अहसास करती है। सूर्य के साथ होने की यातना मूल्य को जीने की यातना है। यथार्थवादी मूल्य दृष्टि में हमें अभिशिप्त आत्माओं से जोड़कर हमारा हमारे भीतर विस्तार करती है। सूर्य सत्य भी है और मूल्य भी किंतु आज इसे नकारने वालों की कमी नहीं क्योंकि असत्य और मूल्यहीनता का जीवन एक हलका-फुलका जीवन है। सुविधा का जीवन है जो बहुत सुख देता है। किंतु कवि को यह सूरज सोने नहीं देता। सत्य और मूल्य की दृष्टि निरंतर अंधकार में राह के अन्वेषण की दृष्टि है। यह दृष्टि बड़ी विरल हो गई है। इक्का-दुक्का आदमी कहीं इस खोज में लगा हुआ है। जब सभी लोग या अधिकांश लोग सोए हुए हों तो मूल्यहीनता की स्थिति कितनी भयानक हो जाती है और उसमें सूरज को ढोने वाले की मनःस्थिति कितनी भारी हो जाती है। यह स्थिति भी कितनी बेचैन करने वाली है कि यह अँधेरा सदियों से सूरज की रोशनी से बिंधकर चीखता तो है किंतु फिर चुप हो जाता है। फिर भी थका हुआ सूरज रुकता कहाँ है उसके माथे पर सवेरा रह-रहकर उभरता है। कवि के मन में प्रश्न है कि मानव आदर्श मूल्यों का बोझ उठा सकता है या नहीं! इस कर्तव्य के चलते वह अपने अधिकार भी खो रहा है।

काव्य संग्रह 'जुलुस कहा जा रहा है' (1989) में साठोत्तरी कविताओं की राजनीतिक चेतना का अंश भी द्रष्टव्य होता है। धूमिल, बाबा नागार्जुन, रघुवीर सहाय की कविताएँ शासन पर सीधे-सीधे छुरा भोंक देने वाली कविताएँ है जो आपकी नहीं! आपके भाव तो वहीं हैं किंतु दबा हुआ मानव, सहमा हुआ मानव एवं प्रश्न करता मानव आपकी कविता का प्रमुख अंग है। क्या आप संपूर्ण रूप से माक्सवादी हो? इसका उत्तर है - नहीं! इस संदर्भ में आप स्वयं लिखते हो - "एक तो यह कि मैंने मार्क्सवादी दर्शन को वस्तु के रूप में नहीं अंतर्दृष्टि के रूप में अपनाया, इसलिए मेरी कविताओं पर मार्क्सवाद हावी नहीं हुआ। वह मेरे परिवेशगत अनुभवों के भीतर से उभरता रहा और उन्हें एक वैचारिक अन्विति प्रदान करता रहा। दूसरे मैंने मार्क्सवादी आलोचकों और कवियों द्वारा निर्धारित वस्तु जगत में अपने को कैद नहीं होने दिया, व्यक्ति और समाज की अन्य अनेक वास्तविकताओं और अनुभवों के प्रति अपने को खुला रखा।"[18] इस आयाम का विस्तार तो नहीं, किंतु पृष्ठभूमि स्पष्ट की जा सकती है। ताकि आपके काव्य का स्वभाव स्पष्ट हो सके। जैसे - 'झूठे आश्वासन' की राजनीति उस परिवेश में भी होती थी और आज भी हो रहीं है। जैसे 'हवा से डरने लगा हूँ' कविता की पंक्तियाँ देखें - "पक्की सड़क देने के वायदे में / वे मेरे घर के सामने की कच्ची सड़क / रौंद कर चले गये / सड़क धूल का अंबार बन कर पड़ी है / मैं मना रहा हूँ कि हवा न बहे / हवा बहते ही सड़क घर और घर सड़क बन जाएगा / और वे खोजने पर भी / दिखाई नहीं पड़ेंगे पाँच साल तक / हाय, वे क्या कर गये / कि अब मैं हवा से डरने लगा हूँ।"[19] देखा जाए तो तिथि 11 अप्रैल 1983 को लिखी गई इस कविता में समकालीन स्थितियों का सजग चित्रण भी दृष्टिगत हो रहा है।

आइए अब रामदरश मिश्र की कविताओं में गांधी दर्शन भी देख लेते हैं – "धरती की पलके बोझिल हैं, भीग रहा आँसू से अन्तर / विधवा सी ये शून्य दिशाएँ रोती हैं अम्बर से झर झर / यह दिल्ली की साँझ धूसरित खोज रही यौवन की घड़ियाँ / माँग रही माता अम्बर से अपना बापू आहें भर-भर / देख रही मानवता अपने सपनों की वीरान चिताएँ / नव गुंजन से गुंजित यह वन जल सहसा सुनसान हुआ क्यों?"[20] मानवता यथार्थबोध का प्रथम एवं महत्वपूर्ण तत्व है। गांधीजी

की मृत्यु का क्रंदन विलाप उक्त कविता में प्रस्तुत हुआ है। 'हा! राष्ट्र पिता' यह कविता तिथि 1 फरवरी सन 1948 को लिखी गई थी। कविता के विकासक्रम की दृष्टि से – गांधीवादी धारा गांधी हत्या के बाद लगभग सन 1960 तक ही चली थी। इस संदर्भ में डॉ एस. गम्भीर ने लिखा है – "साठोत्तर हिन्दी काव्य में गांधीवाद रचना की मुख्य उर्जा का विषय नहीं रह जाता है। लगता है जैसे साठोत्तर रचना की संस्कृति में उसकी प्राथमिकताएं धूमिल सी हो चुकी हैं और वह व्यंग्य रूप होकर एक ऐसा मुहावरा बन गया है जो पिछड़ेपन एवं लघुता का लाक्षणिक अर्थ देने लगा है।"[21] तात्पर्य है कि रामदरश मिश्र ने 'मानवतावाद की चिंता' का उन्माद अपने काव्य सृजन के आरंभिक दौर से ही प्रस्तुत किया था।

काव्य संग्रह 'बारिश में भीगते बच्चे' (1997) तथा 'ऐसे में जब कभी' (1999) तक आते-आते ऐसा लगा रहा है कि आपकी काव्य शक्ति आधुनिकता के साथ शताब्दी का यथार्थबोध प्रस्तुत कर रही है। इस संदर्भ में 'बाग' कविता की पंक्तियाँ देखें - "चारों ओर मशीन की घरघराहट / आकाश को ढकता हुआ/ ईंट के भट्टों से फूटता गंधीले धुएँ का विस्तार / घरों की मासूम खिलखिलाहट को पीती हुई/पक्के मकानों की कसी हुई मुसकान / लोगों के चेहरों पर पसरी हुई / बाज़ार की सपाट सम्पन्नता"[22] आगे लिखते हैं - "मैं अजनबी-सा इधर-उधर भटक रहा हूँ / किससे पूछूं / यहीं कहीं आमों का बड़ा-सा बाग था / वह कहाँ गया? / उसके किनारे एक कुआँ था/बगल में एक बड़ा-सा तालाब / बाग में अनन्त पेड़ थे/जिनके अपने-अपने नाम थे/अपनी-अपनी शख्सियत थी।"[23] मशीनीकरण का युग मानव के सहज जीवन को समाप्त कर देगा। बाजारों की चमक-धमक, मनुष्य को निराश बना रही है। समसामयिक परिस्थितियों में सृष्टि की चिंता कवि को सता रही है। बाग उजड़ गए, वह तालाब, पेड़ कहा गए? जो कवि ने बरसों पहले देखें थे। रामदरश मिश्र जी का कवि मन सदैव मानव जीवन की मंगलमयी कामना करता है। समग्र शति का यथार्थबोध आपकी कविताओं का अभिन्न अंग है। इसी कारण आपका काव्य सृजन अन्य कवियों से अलग है। रामदरश मिश्र तिथि 15 अगस्त सन 1924 को जन्में तथा अपने जीवन के सौ वर्ष पूर्ण कर चुके हैं। आपको सन 2015 में काव्य संग्रह 'आग की हँसी' के लिए 'साहित्य अकादमी सम्मान' से पुरस्कृत किया गया है।

निष्कर्ष -

विश्र्व युद्ध की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियाँ आपने देखी थी। मानव घोर दुःख, पीडा़ से गुजर रहा था। कवि का यथार्थ भोगा हुआ यथार्थ है। युद्ध का विस्फोट, सैनिकों का बलिदान आपने परतंत्रता काल में देखा है। इस दृश्य के साथ आपकी कविता में छायावाद, प्रगतिवाद, नई कविता, साठोत्तर कविता, समकालीन कविता एवं गांधी दर्शन का समिश्र संयोग है। गरीबी, भूखमरी, अकाल की स्थितियों का दुर्दम्य चित्र आपकी कविता का विषय रहा है। अन्य प्रगतिशील कवियों के काव्य का उग्र, रौद्र रूप आपकी कविता में नहीं। मानवता समाप्त होने की चिंता, मनुष्य की जिजीविषा, सांसारिक सुख की आस इन सभी धाराओं से मार्गक्रमण करते हुए, मानव जीवन को आशावादी, संयमी, सशक्त एवं समग्र बनने की प्रेरणा आपकी कविता की मूल संवेदना है। मानव के सुख-दुःखों को जानना ही आपकी कविता का प्रथम एवं अंतिम लक्ष्य है। इस यथार्थ का माध्यम प्रकृति हो, प्रतीक हो, भाव हो, संवेग हो, घटना हो या फिर सूक्ष्मातिसूक्ष्म संवेदना जैसे 'आत्महत्या से पहले'। आपकी कविता में निश्चित स्थानों पर प्रतीक एवं बिंबों का प्रयोग हुआ है। मानव को माध्यम बनाकर विश्र्व कल्याण की कामना ही आपका भावपक्ष है। साठोत्तर कविता का मुख्य अंग 'राजनीतिक चेतना' का सौम्य प्रारूप भी लक्षित होता है। स्पष्ट है कि आपकी कविता किसी एक वाद, विचारधारा में बहनेवाली कविता नहीं। समय के साथ-साथ चलनेवाली कविता है। दूसरी बात आपकी कविता का ऐसा कोई समय नहीं कि विशिष्ट विचारधाराओं से बहनेवाली श्रृंखला को आपने दिर्घ काल तक पकड़कर रखा हो जैसे – छायावाद की समाप्ति के लगभग 15 वर्ष बाद छायावाद के कुछ प्रतीक एवं प्रतिमान आपकी कविता में दृष्टिगत होते है। इसलिए प्रस्तुत शोधपत्र के शिर्षक में 'यथार्थबोध' है 'यथार्थवाद' नहीं 'बोध' का स्वरूप केवल 'समझ' के प्रारूप में जाना जाता है। 'वाद' एक संपूर्ण 'विचार' होता है। तात्पर्य - शती की सामाजिक परिस्थितियों का 'यथार्थबोध!' रामदरश मिश्र यथार्थबोध के मूर्धन्य कवि हैं। ('चोटी के कवि हैं') आपके काव्य में लंबी तथा छोटी कविताएँ प्रस्तुत की गई है। आपकी कविता जनमानस को संघर्ष की प्रेरणा देती है। आपके विशालकाय काव्य को एक शोध पत्र में प्रस्तुत कर पाना असंभवसा कार्य है। कारणवश सभी प्रमुख बिंदुओं को ढ़ाल पाना चुनौतीपूर्ण कार्य रहा।

संदर्भ सूची -

1) संपा. मिश्र रामदरश एवं मिश्र स्मिता, 'रामदरश मिश्र रचनावली, खंड-**1**', नमन प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन **2000**, पृष्ठ.क्र **3**
2) वहीं, पृष्ठ.क्र.**3**
3) वहीं, पृष्ठ.क्र.**1**
4) वहीं, पृष्ठ.क्र.**5**
5) वहीं, पृष्ठ.क्र.**6**
6) वहीं, पृष्ठ.क्र.**4**
7) जानकी देवी, 'महादेवी वर्माःकाव्य संकलन, खंड-**3**', एस. के कानपुर, प्रथम संस्करण, सन **1998**, पृष्ठ सं. **8**
8) वहीं, पृष्ठ.क्र.**9**

9) वहीं, पृष्ठ.क्र.**14**
10) वहीं, पृष्ठ.क्र.**23**
11) वहीं, पृष्ठ.क्र.**24**
12) संपा. मिश्र रामदरश एवं मिश्र स्मिता, 'रामदरश मिश्र रचनावली, खंड-**1**', नमन प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन **2000**, पृष्ठ.क्र **28**
13) वहीं, पृष्ठ.क्र.**103**
14) वहीं, पृष्ठ.क्र.**111**
15) वहीं, पृष्ठ.क्र.**175**
16) वहीं, पृष्ठ.क्र.**190**
17) मिश्र रामदरश, 'कंधे पर सुरज', राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन **1977**, पृष्ठ.क्र.**79**
18) संपा. मिश्र रामदरश एवं मिश्र स्मिता, 'रामदरश मिश्र रचनावली, खंड-**2**', नमन प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन **2000**, पृष्ठ.क्र **IX**
19) वहीं, पृष्ठ.क्र.**70**
20) संपा. मिश्र रामदरश एवं मिश्र स्मिता, 'रामदरश मिश्र रचनावली, खंड-**2**', नमन प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन **2000**, पृष्ठ.क्र. **63**
21) डॉ. एस्. गंम्भीर, साठोत्तर हिंदी काव्य में राजनीतिक चेतना, विद्या विहार, कानपुर, प्रथम संस्करण, सन **1992**, पृष्ठ.क्र.**32**
22) संपा. मिश्र रामदरश एवं मिश्र स्मिता, 'रामदरश मिश्र रचनावली, खंड-**2**', नमन प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन **2000**, पृष्ठ.क्र. **166**
23) वहीं, पृष्ठ.क्र.**166**

मैं डॉ सागर गणेश चौधरी विश्वासपूर्ण कहता हूँ कि यह मेरा मौलिक शोध पत्र है तथा अब तक कही भी प्रकाशित नहीं हुआ। मैं यह सत्यपित करता हूँ।

Disclaimer/Publisher's Note: The views, findings, conclusions, and opinions expressed in articles published in this journal are exclusively those of the individual author(s) and contributor(s). The publisher and/or editorial team neither endorse nor necessarily share these viewpoints. The publisher and/or editors assume no responsibility or liability for any damage, harm, loss, or injury, whether personal or otherwise, that might occur from the use, interpretation, or reliance upon the information, methods, instructions, or products discussed in the journal's content.

****